छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

रिट याचिका क्रमांक - 4288/2004

याचिकाकर्ता :- मेसर्स उत्कल हाइवेज, श्री विहार कॉलोनी, तुलसीपुर, कटक (उड़ीसा), पंजीकृत भागीदारी फर्म, पंजीयन क्रमांक 171/1980। द्वारा भागीदार :-

1. नरेंद्र सिंह मल्होत्रा आत्मज उधम सिंह मल्होत्रा, उम्र 47 साल
2. मंजीत सिंह मल्होत्रा आत्मज उधम सिंह मल्होत्रा, उम्र 47 साल
3. श्रीमती अमृत कौर मल्होत्रा आत्मजा नन्द सिंह, उम्र 68 साल
4. श्रीमती मनिंदर कौर मल्होत्रा आत्मजा जोदा सिंह, उम्र 45 साल
5. श्रीमती जीतेन्दर कौर मल्होत्रा आत्मजा जसबीर सिंह जग्गी, उम्र 36 साल

सभी निवासी :- 26, बैरामजी टाउन, नागपुर-13

बनाम

उत्तरवादी :- 1. छत्तीसगढ़ राज्य द्वारा सचिव, छत्तीसगढ़ सरकार, जल संसाधन विभाग, रायपुर, छत्तीसगढ़

प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

रिट याचिका क्रमांक - 4288/2004

मेसर्स उत्कल हाइवेज एवं अन्य

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य एवं एक अन्य

---

28 जनवरी 2005 को आदेश हेतु सूचीबद्ध

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

रिट याचिका क्रमांक - 4288/2004

मेसर्स उत्कल हाइवेज एवं अन्य
बनाम
छत्तीसगढ़ राज्य एवं एक अन्य

उपस्थित :-

याचिकाकर्तागण हेतु	-	श्री उत्कर्ष वर्मा, अधिवक्ता
राज्य/उत्तरवादी क्रमांक 1 एवं 2 हेतु	-	श्री सुमेश बजाज, उप-शासकीय अधिवक्ता

आदेश

(28 जनवरी, 2005 को पारित)

एल.सी. भादू, न्यायाधीश

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत दायर इस रिट याचिका में याचिकाकर्ता मेसर्स उत्कल हाईवेज ने अपने भागीदारों के माध्यम से 15-4-2004 के आदेश की औचित्य एवं शुद्धता पर सवाल उठाया है, जिसके तहत उत्तरवादी क्रमांक 2, कार्यपालन अभियंता ने 128 लाख रुपये की लागत से 19 किलोमीटर से 26 किलोमीटर तक मुख्य नहर के चिनाई संरचनाओं एवं मिट्टी के काम के निर्माण कार्य को निष्पादित करने हेतु जल संसाधन विभाग एवं याचिकाकर्ता के बीच दिनांक 11-3-2003 को हुए संविदा का पर्यवसान कर दिया है, इस आधार पर उत्तरवादी क्रमांक २ की कथित कार्यवाही अवैध, मनमानी एवं कानून की दृष्टि से गलत है एवं नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन करते हुए याचिकाकर्ता को युक्तियुक्त अवसर दिए बिना आदेश पारित किया गया है।

(2) इस रिट याचिका को दायर करने के पीछे संक्षिप्त तथ्य यह है कि मुख्य अभियंता, महानदी गोदावरी बेसिन, रायपुर ने अनुलग्नक-पी/2 के माध्यम से प्रमुख अभियंता छ.ग. जल संसाधन विभाग रायपुर के पास ए-4 से ए-5 श्रेणी में पंजीकृत 127 लाख की लागत से खरखरा मोहादीपाट चरण-2 के 19 किलोमीटर से 26 किलोमीटर तक मुख्य नहर के 14 चिनाई संरचनाओं एवं मिट्टी के काम हेतु ठेकेदारों से निविदाएं आमंत्रित की थीं। इसके जवाब में याचिकाकर्ता फर्म ने अपनी निविदा प्रस्तुत की एवं जांचोपरांत उसे स्वीकार कर लिया गया। इसके अनुसरण में याचिकाकर्ता के करार दिनांक 11-3-2003 को स्वीकार कर लिया गया एवं अनुलग्नक-पी/4 दिनांक 11-3-2003 के अनुसार उक्त कार्य हेतु कार्यादेश उत्तरवादी क्रमांक 2 द्वारा याचिकाकर्ता को दिया गया जिसमें उक्त कार्य पत्र जारी किये जाने की तिथि से 1 जुलाई से 30 सितम्बर तक 3 माह के मानसून काल सहित 11 माह के अन्दर निष्पादित किया जाना था। याचिकाकर्ता ने कार्य प्रारम्भ कर दिया परन्तु याचिकाकर्ता को दिनांक 8-5-2003 को उत्तरवादी क्रमांक 2

द्वारा पत्र जारी किया गया जिसमें कहा गया कि करार के खंड-3.3 के अनुरूप कार्य निष्पादित नहीं किया गया है। मिट्टी का कार्य संतोषजनक पाया गया परन्तु पक्का कार्य निष्पादित करने हेतु सामग्री स्थल पर एकत्रित नहीं की गई। आगे उल्लेख किया गया कि दिनांक 15-4-2003 को याचिकाकर्ता के प्रतिनिधि ने स्थल निरीक्षण के समय मुख्य अभियंता को आश्वासन दिया था कि 17-4-2003 तक पक्का कार्य हेतु सामग्री स्थल पर आनी शुरू हो जाएगी, लेकिन इसके बावजूद भी उक्त कार्य नहीं हुआ। दिनांक 17-11-2003 के पत्र द्वारा उत्तरवादी क्रमांक 2 ने याचिकाकर्ता फर्म को पुनः पत्र लिखा कि करार दिनांक 11-3-2003 के तहत कार्य 11 माह की अवधि में पूरा किया जाना है। करार के साथ दिए गए सारणी के अनुसार अब तक 85 प्रतिशत कार्य पूरा हो जाना चाहिए था, लेकिन अभी तक केवल 44 प्रतिशत कार्य ही हुआ है। नोटिस में यह भी उल्लेख किया गया कि करार के अनुसार 'आपको कार्य की प्रगति के बारे में एक रिपोर्ट भी प्रस्तुत करनी थी, लेकिन वह भी प्रस्तुत नहीं की गई है। अब केवल 3 माह का समय शेष है, जबकि 56 प्रतिशत कार्य अभी भी पूरा होना बाकी है।' अतः याचिकाकर्ता को शेष कार्य को पूरा करने हेतु 3 दिन की अवधि के भीतर अपनी समय-सारिणी प्रस्तुत करने हेतु कहा गया। याचिकाकर्ता को तदनुसार कार्य पूरा करने हेतु भी कहा गया, अन्यथा करार के खंड-4.3.3 के अनुसार कार्यवाही की जाएगी एवं जिसके लिए याचिकाकर्ता फर्म जिम्मेदार होगी। यह भी उल्लेख किया गया कि इसे अंतिम चेतावनी के रूप में माना जावे। हालाँकि, उपरोक्त नोटिस के जवाब में, याचिकाकर्ता द्वारा कोई प्रगति नहीं की गई, इसलिए, पत्र दिनांक 9-12-2003 के माध्यम से याचिकाकर्ता को सूचित किया गया था कि पत्र दिनांक 17-11-2003 के जवाब में याचिकाकर्ता को अनु-विभागीय अधिकारी के माध्यम से 3 दिनों के भीतर शेष कार्य पूरा करने की समय-सारणी प्रस्तुत करनी थी, लेकिन इसे प्रस्तुत नहीं किया गया है, जो यह दर्शाता है कि याचिकाकर्ता फर्म काम पूरा करने में रुचि नहीं रखती थी।

(3) पत्र के पैरा-2 में उल्लेख किया गया कि चेतावनी के बावजूद शेष कार्य प्रारम्भ नहीं किया गया है तथा न ही इस सम्बन्ध में कोई आवेदन प्रस्तुत किया गया है, अतः खंड-4.3.3.3 के अन्तर्गत संविदा का पर्यवसान किया जाता है तथा शेष कार्य याचिकाकर्ता फर्म के जोखिम एवं लागत पर किसी विकलनीय अभिकरण से कराया जायेगा। याचिकाकर्ता को दिनांक 17-12-2003 को किये गये कार्य के मापन हेतु स्थल पर उपस्थित रहने के लिए कहा गया था।

(4) दिनांक 9-12-2003 का पत्र प्राप्त करने के बाद उत्तरवादीगण द्वारा प्रस्तुत जवाबदावा के अनुसार, याचिकाकर्ता ने दिनांक 10-12-2003 को पत्र के माध्यम से उत्तरवादी क्रमांक 2 के कार्यालय से संपर्क किया, जिसमें सूचित किया गया कि कार्य दिनांक 10-12-2003 से शुरू किया जाएगा एवं नियत अवधि के भीतर शेष कार्य पूरा करने का वादा किया गया। याचिकाकर्ता के अनुरोध के आलोक में उत्तरवादी क्रमांक 2 ने उसके खिलाफ प्रस्तावित कार्यवाही को स्थगित कर दिया एवं उसे काम जारी रखने एवं वचन अनुसार उसे पूरा करने की अनुमति दी गई। हालांकि, याचिकाकर्ता ने कभी भी समय विस्तार हेतु अनुरोध नहीं किया, इसके बजाय उसने नियत समय के भीतर काम पूरा करने का वादा किया था। लेकिन याचिकाकर्ता अपने वादे के विपरीत नियत समय अर्थात दिनांक 10-2-2004 तक संतोषजनक प्रगति दिखाने में विफल रहा एवं

उस समय तक याचिकाकर्ता ने केवल 46.53% काम पूरा किया था। याचिकाकर्ता को देरी का कारण बताते हुए एक महीने के भीतर करार के खंड-4.3.5.1 के अनुसार समय विस्तार हेतु आवेदन करना आवश्यक था। याचिकाकर्ता ने दिनांक 27-1-2004 को आवेदन किया, जबकि याचिकाकर्ता को 30 अक्टूबर, 2003 को आवेदन करना चाहिए था। जब याचिकाकर्ता का अनुरोध दिनांक 27-1-2004 विचाराधीन था तब याचिकाकर्ता ने विभाग को कोई सूचना दिए बिना स्थल से सभी मशीनरी एवं निर्माण सामग्री हटा दी। इसलिए, उत्तरवादी क्रमांक 2 ने याचिकाकर्ता ठेकेदार को पत्र दिनांक 11-3-2004 जारी किया एवं उसे स्थल से हटाए गए सभी सामग्रियों एवं उपकरणों को लाने एवं एक सप्ताह के भीतर काम शुरू करने का निर्देश दिया। इसकी प्रति अनुलग्नक-आर/6 है। उक्त पत्र के प्रत्युत्तर में याचिकाकर्ता ने अनुलग्नक-आर/7 दिनांक 17-3-2004 के माध्यम से आश्वासन दिया कि 20 मार्च 2004 से कार्य प्रारंभ कर दिया जाएगा, परंतु इसके बाद भी याचिकाकर्ता ने दिनांक 12-4-2004 तक कार्य प्रारंभ नहीं किया। जब कार्यपालन अभियंता, दुर्ग ने मौका निरीक्षण हेतु स्थल का दौरा किया, तो उन्होंने पाया कि याचिकाकर्ता ने स्थल पर श्रमशक्ति की तैनाती नहीं की है, न ही सामग्री एवं मशीनरी एकत्र की है, जिससे कार्यपालन अभियंता को विश्वास हो गया कि याचिकाकर्ता कार्य को निष्पादित करने के अपने आशय को प्रदर्शित करने में विफल रहा है एवं कार्य की प्रगति में देरी हेतु झूठे बहाने बना रहा है, इसलिए कार्य के हित की रक्षा हेतु, पत्र दिनांक 15-4-2004 के तहत करार के खंड-4.3.3.3 के निहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए याचिकाकर्ता के जोखिम एवं व्यय पर अन्य विकल्पनीय अभिकरण को दिए जाने हेतु करार समाप्त कर दिया गया।

(5) उत्तरवादीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उठाई गई अन्य आपत्तियों के अतिरिक्त, जवाबदावा में यह भी उल्लेख किया गया कि चूँकि यह प्रकरण संविदात्मक विषय से संबंधित है, अतः भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत प्रस्तुत की गई याचिका संधार्य नहीं है।

(6) मैंने उभय पक्ष के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना।

(7) याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री उत्कर्ष वर्मा द्वारा निवेदन किया गया कि याचिकाकर्ता को कोई अवसर एवं कारण बताओ नोटिस दिए बिना ही अवधि पूरी होने से पहले ही उत्तरवादी क्रमांक 2 ने आदेश दिनांक 9-12-2003 के तहत याचिकाकर्ता का करार समाप्त कर दिया, जबकि करार की अवधि दिनांक 10-2-2004 तक थी। उन्होंने आगे निवेदन किया कि उत्तरवादी क्रमांक 2 की कार्यवाही कानून की दृष्टि से गलत है एवं नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के विपरीत है, क्योंकि याचिकाकर्ता को कारण बताओ एवं सुनवाई का कोई अवसर नहीं दिया गया। आगे तर्क दिया कि इसलिए रिट याचिका संधार्य है। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने यह भी तर्क दिया कि उत्तरवादी क्रमांक 2 को खंड-4.3.2(क) के प्रावधानों को लागू करना चाहिए था, याचिकाकर्ता को काम निष्पादित करने की अनुमति देनी चाहिए थी, एवं सीधे खंड-4.3.3.3 के प्रावधानों को लागू करना करार की शर्तों के अनुरूप नहीं था। उन्होंने राजेश सदानंद पाटिल आदि बनाम अतिरिक्त कलेक्टर, पुणे एवं अन्य, जो कि एआईआर 2003 बॉम्बे 304 में प्रकाशित है, हरबंसलाल साहनिया एवं अन्य बनाम इंडियन ऑयल कॉरपोरेशन लिमिटेड एवं अन्य, जो कि एआईआर 2003 सुप्रीम कोर्ट 2120 में प्रकाशित है, बीना पावर सप्लाई कंपनी लिमिटेड,

भोपाल एवं अन्य बनाम मध्य प्रदेश राज्य एवं अन्य, जो कि एआईआर 2004 मध्यप्रदेश 68 में प्रकाशित है, तथा अशोक कुमार ढींगरा एवं अन्य बनाम ओरिएंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड एवं अन्य, जो कि एआईआर 2004 दिल्ली 161 में प्रकाशित है, का अवलंब लिया है।

(8) दूसरी ओर, उत्तरवादीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि चूंकि मामला संविदात्मक दायित्व से संबंधित है, इसलिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रिट याचिका संधार्य नहीं है। उन्होंने आगे निवेदन किया कि चूंकि पक्षकार संविदा करार के अनुसार कार्य करने हेतु बाध्य थे एवं उत्तरवादीगण ने करार के प्रावधान के अनुसार कार्यवाही की, इसलिए, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन का कोई सवाल ही नहीं था। उन्होंने मेसर्स राधाकृष्ण अग्रवाल एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, जो कि एआईआर 1977 सुप्रीम कोर्ट 1496 में प्रकाशित है, भारतीय खाद्य निगम एवं अन्य बनाम जगन्नाथ दत्ता एवं अन्य, जो कि एआईआर 1993 सुप्रीम कोर्ट 1494 में प्रकाशित है, उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य बनाम ब्रिज एंड रूफ कंपनी (इंडिया) लिमिटेड, जो कि (1996) 6 सुप्रीम कोर्ट केसेस 22 में प्रकाशित है, केरल राज्य विद्युत बोर्ड एवं अन्य बनाम कुरियन ई. कलाथिल एवं अन्य, जो कि (2000) 6 सुप्रीम कोर्ट मामले 293 में प्रकाशित है, बिहार राज्य एवं अन्य बनाम जैन प्लास्टिक एवं केमिकल्स लिमिटेड, जो कि (2002) 1 सुप्रीम कोर्ट केसेस 216 में प्रकाशित है एवं भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण बनाम गंगा एंटरप्राइजेज एवं अन्य, जो कि (2003) 7 सुप्रीम कोर्ट केसेस 410 में प्रकाशित है, का अवलंब लिया है।

(9) पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत तर्कों के आलोक में, मैंने उभयपक्ष के बीच किए गए संविदा करार के अभिलेखों एवं प्रासंगिक धाराओं का अवलोकन किया। खंड-4.3.2(क) विलम्ब हेतु प्रतिकर से संबंधित है, जिसमें यह परिकल्पित है कि 'ठेकेदार द्वारा निविदाओं में दर्ज कार्य करने हेतु नियत समय का सख्ती से पालन किया जाएगा एवं इसकी गणना उस तिथि से की जाएगी, जिस दिन ठेकेदार को कार्य शुरू करने का आदेश दिया गया है। संविदा की नियत अवधि के दौरान कार्य को सम्यक तत्परता के साथ आगे बढ़ाया जाएगा (समय को ठेकेदार के संविदा भाग का मर्म मानते हुए) एवं ठेकेदार को प्रतिकर के रूप में 1% के बराबर राशि या कार्यपालन अभियंता/अधीक्षण अभियंता द्वारा तय की गई ऐसी छोटी राशि का भुगतान करना होगा।' खंड-4.3.2(ख) व्यतिक्रम खंड है, जिसमें यह परिकल्पित है कि 'यदि ठेकेदार काम को आगे बढ़ाने में लापरवाही बरतता है या सम्यक तत्परता के साथ आगे बढ़ने में विफल रहता है या वह करार के किसी भी प्रावधान का उल्लंघन करता है, तो कार्यपालन अभियंता ठेकेदार को एक नोटिस देगा, जिसमें पालन में कमियों की पहचान की जाएगी एवं सुधारात्मक कार्यवाही की मांग की जाएगी। नोटिस में स्पष्ट रूप से लिखा होना चाहिए कि यह इस खंड के प्रावधानों के तहत दिया गया है। ऐसे नोटिस के बाद, ठेकेदार नोटिस की तारीख से तब तक स्थल से कोई भी प्लांट उपकरण एवं सामग्री नहीं हटाएगा, जब तक कि कमियों को ठीक नहीं कर लिया जाता है। यदि ठेकेदार नोटिस प्राप्त होने के चौदह दिनों के भीतर संतोषजनक सुधारात्मक कार्यवाही करने में विफल रहता है तो कार्यपालन अभियंता पूर्णतः या आंशिक रूप से पर्यवसान कर देगा।' संविदा का खंड-4.3.3 एक ऐसी स्थिति से

संबंधित है, जहां ठेकेदार शास्ति देने हेतु उत्तरदायी हो जाता है एवं यह परिकल्पित है कि **किसी भी मामले में, जिसमें इस संविदा के किसी भी खंड या खंडो के तहत ठेकेदार ने खुद को उत्तरदायी बनाया हो**, अपनी पूरी जमा प्रतिभूति राशि के बराबर प्रतिकर का भुगतान करने हेतु या ठेकेदार की गंभीर बीमारी या मृत्यु या किसी अन्य कारण से काम को छोड़ देने की स्थिति में, छत्तीसगढ़ के राज्यपाल की ओर से संभागीय अधिकारी को खंड-4.3.3.1, 4.3.3.2 एवं 4.3.3.3 में परिकल्पित निम्नलिखित में से किसी एक तरीके को अपनाने की शक्ति प्रदान की गई है। खंड-4.3.4.1 में आगे यह परिकल्पित है कि यदि खंड-4.3.3 के अंतर्गत कोई कार्यवाही नहीं की जाती है तो भी ठेकेदार प्रतिकर देने हेतु उत्तरदायी होगा।

(10) अतः, खंड-4.3.2(क) एवं 4.3.2(ख) को खंड-4.3.3 से 4.3.3.3 के साथ पढ़ने से यह स्पष्ट होता है कि यदि ठेकेदार पहले चरण में निर्धारित समय के भीतर काम निष्पादित करने में विफल रहता है, तो अभियंता खंड-4.3.2(क) के प्रावधानों के अनुसार ठेकेदार पर शास्ति अधिरोपित करने हेतु सशक्त था। इसके अलावा, यदि ठेकेदार सम्यक तत्परता के साथ काम पूरा करने में विफल रहता है एवं वह संविदा के प्रावधानों का उल्लंघन करता है, तो कार्यपालन अभियंता खंड-4.3.2(ख) के तहत परिकल्पित प्रक्रिया का पालन करने के बाद संविदा का समापन करने हेतु भी सशक्त था। उपरोक्त के अतिरिक्त, यदि ठेकेदार संविदा के किसी भी शर्त का उल्लंघन करता है एवं स्वयं को प्रतिकर का भुगतान करने हेतु उत्तरदायी बनाता है, तो उत्तरवादी विभाग का कार्यपालन अभियंता खंड-4.3.3.1 के प्रावधानों के अनुसार संविदा को विखंडित करने हेतु सशक्त था एवं खंड-4.3.3.2 के प्रावधानों के अनुसार, उत्तरवादी विभाग का कार्यपालन अभियंता श्रमिक या विभागीय श्रमिक को नियोजित कर कार्य निष्पादित करने एवं विभाग द्वारा निष्पादित कार्य की राशि वसूलने हेतु अधिकृत था। खंड-4.3.3.3 में आगे यह परिकल्पित है कि विभाग ठेकेदार द्वारा निष्पादित कार्य को माप सकता है एवं ठेकेदार से अनिष्पादित कार्य को वापस लेने एवं इसे पूरा करने हेतु किसी अन्य ठेकेदार को देने हेतु समर्थ था एवं इस प्रक्रिया में यदि विभाग द्वारा कोई अतिरिक्त राशि खर्च की जाती है, तो विभाग ठेकेदार से उस अतिरिक्त राशि को वसूलने हेतु समर्थ था। इस मामले में, उत्तरवादी विभाग ने खंड-4.3.3.3 के तहत शक्ति का प्रयोग किया है एवं उत्तरवादी विभाग की यह कार्यवाही संविदा की शर्तों के अनुरूप थी। अतः, मुझे याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता के तर्कों में कोई सार नहीं मालुम होता कि प्रथमत: कार्यपालन अभियंता को खंड-4.3.2(क) के प्रावधानों का अवलंब लेना था। यहां तक कि कार्यपालन अभियंता खंड-4.3.2(क) एवं 4.3.2(ख) के प्रावधानों को लागू किये बिना खंड-4.3.3 के प्रावधानों का उपयोग करने हेतु हकदार था, अगर ठेकेदार संविदा के किसी खंड के उल्लंघन के कारण खुद को प्रतिकार अदा करने हेतु उत्तरदायी बनाता है। उपरोक्त तथ्यों के अवलोकन से पता चलता है कि ठेकेदार ने खुद ही नियत समय के भीतर कार्य पूरा न करके यह स्थिति पैदा की एवं इस तरह खुद को खंड-4.3.3 के तहत कार्यवाही हेतु उत्तरदायी बनाया। खंड-4.3.3, 4.3.3.1, 4.3.3.2 एवं 4.3.3.3 के प्रावधान खंड-4.3.2(क) एवं 4.3.2(ख) से स्वतंत्र हैं एवं विभाग को स्वतंत्र रूप से किसी भी खंड के तहत कार्यवाही शुरू करने का अधिकार था। दूसरे शब्दों में, विभाग के लिए यह अनिवार्य नहीं था कि वह पहले खंड-4.3.2(क) के तहत कार्यवाही शुरू करे एवं उसके बाद ही खंड-4.3.3.3 के तहत कार्यवाही शुरू करे। खंड-4.3.3.3 के तहत आगे

कार्यवाही करने हेतु अभियंता को खंड-4.3.3.3 के तहत आगे कार्यवाही करने से पहले यह सुनिश्चित करना होगा कि ठेकेदार ने संविदा के किसी भी खंड का उल्लंघन कर खुद को प्रतिकर का उत्तरदायी बनाया है।

(11) संविदा की उपरोक्त खंडो के आलोक में यदि हम वर्तमान मामले के तथ्यों पर गौर करें तो यह एक स्वीकृत स्थिति है कि याचिकाकर्ता को दिनांक 11-3-2003 को कार्यादेश दिया गया था एवं कार्य पूरा करने हेतु निर्धारित समय मानसून काल सहित 11 माह दिए गए थे। याचिकाकर्ता को एक समय-सारिणी भी देनी थी जिसके अनुसार उसे अनुलग्नक-4 के अनुसार कार्य पूरा करना था एवं अनुलग्नक-4 के खंड-1 में करार के खंड-3.4 के अनुसार आवश्यक कार्य के निर्माण कार्यक्रम की परिकल्पना की गई है। पहली बार जब कार्य की प्रगति समय-सारिणी के अनुसार नहीं थी, तो कार्यपालन अभियंता ने अनुलग्नक-5 दिनांक 8-5-2003 की सूचना दी जिसमें यह स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया था कि याचिकाकर्ता द्वारा निर्माण कार्यक्रम की समय-सारिणी नहीं दी गई है। आगे यह उल्लेख किया गया कि पक्का निर्माण हेतु सामग्री स्थल पर एकत्रित नहीं की गई, याचिकाकर्ता फर्म के प्रतिनिधि ने मुख्य अभियंता को आश्वासन दिया था कि दिनांक 17-4-2003 तक सामग्री स्थल पर एकत्रित कर ली जाएगी, जबकि दिनांक 17-4-2003 तक सामग्री एकत्रित करना प्रारम्भ नहीं किया गया। याचिकाकर्ता को पक्का निर्माण हेतु सामग्री स्थल पर लाने तथा कार्य प्रारम्भ करने के लिए कहा गया तथा निर्देशित किया गया। इसके पश्चात भी अनुलग्नक-आर/2 दिनांक 17-11-2003 के द्वारा याचिकाकर्ता को पुनः चेतावनी दी गई कि इस समय तक याचिकाकर्ता को 85 प्रतिशत कार्य पूर्ण कर लेना चाहिए था, जबकि याचिकाकर्ता द्वारा मात्र 44 प्रतिशत कार्य ही पूर्ण किया गया तथा 56 प्रतिशत कार्य अभी भी पूर्ण होना शेष है तथा मात्र 3 माह का समय शेष है, अतः याचिकाकर्ता को पुनः 3 दिवस के अन्दर निर्माण कार्य की समय-सारिणी देने के लिए कहा गया, ताकि शेष कार्य पूर्ण किया जा सके। साथ ही उसे यह भी चेतावनी दी गई कि ऐसा न करने पर संविदा करार की खंड-4.3.3 के अन्तर्गत कार्यवाही प्रारम्भ की जाएगी। आगे यह उल्लेख किया गया कि इसके लिए याचिकाकर्ता स्वयं उत्तरदायी होगा। इसकी एक प्रति अनु-विभागीय अधिकारी को भी भेजी गई ताकि कार्य का अनुपालन एवं प्रगति सुनिश्चित की जा सके। जब याचिकाकर्ता 3 दिनों के भीतर समय-सारिणी जमा करने एवं कार्य की प्रगति दिखाने में विफल रहा, तो याचिकाकर्ता को नोटिस दिनांक 9-12-2003 दी गई, जिसमें उसकी विफलता को दर्शाया गया एवं यह भी दर्शाया गया कि उसके संविदा का पर्यवसान हो गया है क्योंकि उसने पर्याप्त प्रगति नहीं दिखाई एवं पिछले पत्रों एवं यहां तक कि पत्र दिनांक 17-11-2003 का भी जवाब नहीं दिया है। जवाबदावा के अनुसार जब दिनांक 10-12-2003 को याचिकाकर्ता के प्रतिनिधि ने कार्यपालन अभियंता से संपर्क किया, जिस पर उसे फिर से समय दिया गया, लेकिन तब भी याचिकाकर्ता काम शुरू करने के लिए सामग्री एवं मशीनरी स्थल पर लाने में विफल रहा, अतः, दिनांक 11-3-2004 को फिर से उत्तरवादी क्रमांक 2 ने याचिकाकर्ता को स्थल पर सामग्री एवं उपकरण लाने के लिए कहा। दिनांक 17-3-2004 को याचिकाकर्ता ने आश्वासन दिया कि वह 20 मार्च 2004 से काम शुरू कर देगा, लेकिन दिनांक 12-4-2004 तक भी काम शुरू नहीं हो सका। अंततः, संविदा के खंड-4.3.3.3 के तहत शक्तियों का प्रयोग कर

आक्षेपित आदेश दिनांक 15-4-2004 पारित किया गया, जिसमें उल्लेख किया गया कि खंड-4.3.3.3 के तहत उसके संविदा का पर्यवसान कर दिया गया है एवं याचिकाकर्ता के जोखिम एवं व्यय पर एक विकलनीय अभिकरण द्वारा शेष कार्य पूरा करने का निर्णय लिया गया है।

(12) अतः, तथ्यों के आधार पर, यह नहीं कहा जा सकता है कि याचिकाकर्ता को संविदा के करार के अनुसार कार्य पूरा न होने का कारण बताने हेतु उचित अवसर नहीं दिया गया था। याचिकाकर्ता ने समय विस्तार हेतु आवेदन नहीं किया था, यहां तक कि किसी भी समय याचिकाकर्ता ने यह मुद्दा नहीं उठाया कि उत्तरवादीगण के कारण विलम्ब हुआ था। प्रथमतः, याचिकाकर्ता को मई, 2003 के महीने में अनुलग्नक-5 के माध्यम से चेतावनी दी गई थी एवं उसके बाद, याचिकाकर्ता को पत्र दिनांक 17-11-2003 के माध्यम से पुनः चेतावनी दी गई थी, जिसमें कार्य की धीमी प्रगति एवं कार्य पूरा न करने में उसकी ढिलाई का स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया था। यह विशेष रूप से उल्लेख किया गया था कि केवल 3 महीने का समय बचा था एवं उन्होंने केवल 44% काम पूरा किया था, फिर भी याचिकाकर्ता द्वारा कोई प्रतिक्रिया नहीं दिखाई गई। पुनः दिनांक 10-12-2003 को याचिकाकर्ता के अनुरोध पर उसे कार्य पूरा करने हेतु कुछ समय दिया गया, लेकिन तब भी वह कोई प्रगति दिखाने या स्थल पर सामग्री लाने में विफल रहा, इसलिए, उसके संविदा को आक्षेपित आदेश दिनांक 15-4-2004 के द्वारा रद्द कर दिया गया। करार से ही पता चलता है कि समय संविदा का सार था एवं याचिकाकर्ता बिना किसी उचित स्पष्टीकरण या कारण के समय पर कार्य पूरा करने में विफल रहा है। याचिकाकर्ता को चेतावनी दी गई थी एवं उत्तरवादीगण द्वारा संविदा करार की खंडो के अनुसार कार्यवाही किया गया था, अतः, याचिकाकर्ता यह आपत्ति नहीं उठा सकता कि उसे अवसर नहीं दिया गया या नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन किया गया है। यह सुस्थापित विधि है कि जब पक्षकारों ने एक संविदा एवं करार किया है, तो उन्हें अपने संविदा के अनुसार कार्य करना होगा एवं कार्यवाही केवल संविदा की शर्तों के अनुसार ही की जानी चाहिए एवं ऐसे मामलों में नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का अवलंब नहीं लिया जा सकता है। अतः, वर्तमान मामले के तथ्यों पर, याचिकाकर्तागण के मामले में गुणागुण के आधार पर कोई सार नहीं है।

(13) माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने के.एल. त्रिपाठी बनाम स्टेट बैंक ऑफ इंडिया एवं अन्य, जो कि एआईआर 1984 सुप्रीम कोर्ट 273 में प्रकाशित है, में यह अभिनिर्धारित किया है कि:

> "......नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन हुआ है या नहीं, यह आरोपों की प्रकृति, की गई अन्वेषण की प्रकृति तथा ऐसी जांचों को नियंत्रित करने वाले किसी भी सांविधिक या प्रासंगिक नियमों की पृष्ठभूमि में ही निर्णय किया जाना चाहिए। मूल अवधारणा प्रशासनिक, न्यायिक या न्यायिककल्प कार्यवाही में न्यायपूर्ण व्यवहार की है। निष्पक्षता का यह सिद्धांत प्रत्येक पक्षकार के बीच किसी भी विवाद की विशेष परिस्थितियों पर निर्भर करता है। यह सत्य है कि किसी पक्ष के विरुद्ध की गई हर वह कार्यवाही जो दंडात्मक या प्रतिकूल परिणाम उत्पन्न करती है, वह नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अनुसार ही होनी चाहिए, किन्तु नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत किसी विशेष परिस्थिति में

> लागू होंगे या नहीं, यह प्रश्न प्रत्येक मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों के आलोक में ही निर्धारित किया जाना चाहिए। मूल आवश्यकता यह है कि न्यायपूर्ण व्यवहार हो एवं निर्णय, प्रासंगिक तथ्यों एवं कारणों के आलोक में, न्यायपूर्ण एवं वस्तुनिष्ठ ढंग से लिया जाए। नैसर्गिक न्याय के नियम सुनम्य होते हैं एवं इन्हें किसी भी अनम्य सूत्र में नहीं बांधा जा सकता।"

इस सिद्धांत के आधार पर, यदि हम वर्तमान मामले के तथ्यों का परीक्षण करें जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, यहाँ याचिकाकर्ता को 11 महीनों के भीतर कार्य निष्पादित करने के लिए दिया गया था एवं समय संविदा का सार था तथा याचिकाकर्ता को सार्वजनिक उद्देश्य हेतु नहर का निर्माण करना था, क्योंकि इसमें सार्वजनिक धन लगा था एवं याचिकाकर्ता को कई नोटिस एवं अवसर दिए जाने के बावजूद उसने कार्य निष्पादित नहीं किया, एवं तभी, आक्षेपित आदेश पारित किया गया। यहां तक कि तथ्य यह भी दर्शाते हैं कि याचिकाकर्ता को अधिक उदार छूट दी गई थी एवं आदेश दिनांक 9-12-2003 द्वारा उसके संविदा के पर्यवसान किए जाने के बाद भी, उसे पुनः कार्य पूर्ण करने का अवसर दिया गया, किंतु वह कार्य निष्पादित करने में विफल रहा।

(14) अब जहाँ तक इस रिट याचिका की संधार्यता का प्रश्न है, बॉम्बे उच्च न्यायालय ने राजेश सदानंद पाटिल (पूर्वोक्त) के मामले में, जिसका याचिकाकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता ने अवलंब लिया है, यह कहा कि—"यह सही है कि सामान्यतः संविदात्मक अधिकारों एवं दायित्वों के प्रवर्तन हेतु पक्षकारों को व्यवहार न्यायालय जाना होता है।" किंतु उस मामले के तथ्यों को देखते हुए, उच्च न्यायालय ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के श्रीलेखा विद्यार्थी जो कि एआईआर 1991 एससी 537 में प्रकाशित है, द्वारकादास मारफतिया एवं महाबीर ऑटो स्टोर्स, जो कि एआईआर 1989 एससी 1642 में प्रकाशित है, तथा एआईआर 1991 एससी 537 का पैरा 28 के निर्णयों पर भरोसा करते हुए यह अभिनिर्धारित किया है कि उत्तरवादीगण द्वारा कई पट्टाधारकों के विरुद्ध सामूहिक कार्यवाही मनमानी थी एवं आगे यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि संविदात्मक मामलों में रिट याचिका का संधार्य न होना लागू नहीं होता है। उस मामले के तथ्य यह थे कि मौजे तांशी के स्थान पर रेत निकालने हेतु राज्य सरकार द्वारा नीलामी की गई थी एवं उसके बाद तहसीलदार ने याचिकाकर्ता को स्थल पर रेत निकालने का कार्य रोकने का निर्देश दिया था। उस स्थिति में, उच्च न्यायालय ने हस्तक्षेप किया एवं अभिनिर्धारित किया कि करार का सामूहिक रूप से रद्द करना मनमाना था। अतः, तथ्यों के आधार पर, उपरोक्त निर्णय से याचिकाकर्ता को कोई मदद नहीं मिलता है। इसी तरह, हरबंसलाल साहनिया (पूर्वोक्त) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय भी याचिकाकर्ता के लिए मददगार नहीं है। उस मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया था कि :-

> 'अनुकल्पिक उपाय का सिद्धांत तब लागू नहीं किया जा सकता है जब मौलिक अधिकारों के प्रवर्तन एवं नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का पालन करने में विफलता का सवाल आता है एवं यदि व्यवहारी का अप्रासंगिक एवं गैर-मौजूद कारण से पर्यवसान किया जाता है।'

इस मामले में, जैसा कि उपर्युक्त उल्लेख किया गया है, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का प्रश्न उत्पन्न नहीं होता क्योंकि कार्यवाही पक्षकारों के बीच हुए संविदा करार के अनुरूप की गई थी, अतः पक्षकारों को करार के खंडों के अंतर्गत कार्य करना आवश्यक था एवं उत्तरवादीगण ने संविदा की खंडों के अनुसार ही कार्य किया।

इसी प्रकार, म.प्र. उच्च न्यायालय द्वारा 'बीना पावर सप्लाई कंपनी लिमिटेड' (पूर्वोक्त) के मामले में दिया गया निर्णय भी याचिकाकर्ता के लिए सहायक नहीं है। तथ्यों के आधार पर वह मामला जमानत राशि की अवैध जब्ती से संबंधित था तथा न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि :-

> 'यह केवल संविदात्मक बाध्यताओं के प्रवर्तन का मामला नहीं है। बोर्ड एक राज्य की प्रणाली है एवं उसे न्यायसंगत, निष्पक्ष एवं उचित तरीके से कार्य करना चाहिए।'

जबकि, वर्तमान मामले में, विषय केवल संविदात्मक बाध्यताओं से संबंधित है।

(15) इसी प्रकार, अशोक कुमार ढींगरा (पूर्वोक्त) के मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि 'अनुच्छेद 227 के तहत अपने क्षेत्राधिकार में मेडिक्लेम पॉलिसी के नवीकरण से इनकार करने के संबंध में बिमान कृष्ण बोस, जो कि 2001 (6) एससीसी 477 में प्रकाशित है, के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के मद्देनजर और उसके सम्मान में, उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि जहां तक मेडिक्लेम पॉलिसी के नवीकरण की सीमा तक रिट याचिका की स्थिरता का सवाल है, वह बिमान कृष्ण बोस के मामले के मद्देनजर संधार्य है।' बिमान कृष्ण बोस के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि :-

> "यहाँ तक कि संविदात्मक संबंधों के क्षेत्र में भी, राज्य एवं उसकी संस्थाओं को निष्पक्षता से कार्य करने का दायित्व है एवं ऐसा करते हुए वे केवल प्रासंगिक तथ्यों पर ही विचार कर सकते हैं। उन्हें निर्णय लेते समय कोई भी अप्रासंगिक या बाहरी विचार नहीं करना चाहिए। उनके कार्यों या निर्णयों में मनमानी नहीं दिखनी चाहिए।"

मेडिक्लेम पॉलिसी के नवीनीकरण से इनकार के मामले में, तथ्यों के आधार पर, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने 'बिमान कृष्ण बोस' के मामले में तथा दिल्ली उच्च न्यायालय ने 'अशोक कुमार ढींगरा' के मामले में यह निष्कर्षित किया है कि उत्तरवादी बीमा कंपनी का मेडिक्लेम पॉलिसी को नवीनीकरण न करने का कार्य मनमाना था। जबकि, वर्तमान मामले में, जैसा कि ऊपर उल्लिखित है, उत्तरवादीगण ने हर समय करार में निहित खंडों के अनुसार कार्य किया तथा निर्माण कार्य में याचिकाकर्ता की सुस्ती एवं ढिलाई पर पहले ही उसे आगाह कर दिया गया था। जब याचिकाकर्ता ने अपनी प्रतिबद्धता पूरी तरह से निभाने एवं कार्य निष्पादित करने में विफलता दिखाई, तब, अंतिम उपाय के रूप में, यह कार्यवाही तब की गई

जब कार्यपालन अभियंता इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि याचिकाकर्ता अपनी प्रतिबद्धता में ईमानदार नहीं है एवं वह कार्य पूरा नहीं कर रहा है।

(16) दूसरी ओर, जैसा कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने 'मेसर्स राधाकृष्ण अग्रवाल एवं अन्य' (पूर्वोक्त) के मामले में अभिनिर्धारित किया है:-

> "राज्य द्वारा पट्टे की संविदा की कुछ शर्तों के उल्लंघन पर संविदा का पर्यवसान- पर्यवसान के विरुद्ध कारण बताओ नोटिस का अवसर देना आवश्यक नहीं है।"

यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि 'जब संविदा में कोई वैधानिक शर्त या बाध्यता न हो, भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 को लागू नहीं किया जा सकता।' आगे यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि:-

> "......जब राज्य या उसके अभिकर्ता केवल साधारण संविदा के क्षेत्र में प्रवेश करते हैं, तो संबंधों का संचालन संवैधानिक प्रावधानों द्वारा नहीं बल्कि विधिसम्मत संविदा द्वारा निर्धारित किया जाता है, जो पक्षकारों के आपसी अधिकारों एवं बाध्यताओं को निर्धारित करता है। जब राज्य या उसके अभिकर्ता इस क्षेत्र में अपने कृत्य करते हैं, तो अनुच्छेद 14 या किसी अन्य संवैधानिक प्रावधान का उल्लंघन होने का प्रश्न ही नहीं उठता। इस क्षेत्र में वे केवल संविदा द्वारा प्राप्त अधिकारों का ही दावा कर सकते हैं एवं केवल संविदा की शर्तों के ही बंधन में रहते हैं जब तक कोई विधि कोई राज्य को विशेष वैधानिक शक्ति या बाध्यता संविदा के क्षेत्र में नहीं देती जो संविदा से पृथक हो। रिट याचिका केवल उन्हीं मामलों में विचारणीय है, जहाँ व्यथित व्यक्ति एवं राज्य के बीच की गयी संविदा किसी अधिनियम या उसके तहत बनाए गए नियमों द्वारा प्रदत्त वैधानिक शक्ति के प्रयोग में किया गया हो तथा याचिका में राज्य द्वारा किसी प्रकार के उल्लंघन का आरोप लगाया गया हो। लेकिन जहाँ राज्य एवं याचिकाकर्ता के बीच किया गया करार अवैधानिक एवं केवल संविदात्मक है, तथा पक्षकारों के अधिकार एवं दायित्व संविदा की शर्तों द्वारा नियंत्रित होते हैं, एवं याचिकाकर्ता संविदा के भंग की शिकायत करता है, तब रिट याचिका चलने योग्य नहीं है।"

इसी तरह का विचार माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने भारतीय खाद्य निगम एवं अन्य (पूर्वोक्त) के मामले में अपनाया है एवं अभिनिर्धारित किया है कि 'संविदा की शर्तें एवं नियम जो पर्यवसान की अनुमति देते हैं- पर्यवसान की सूचना नीतिगत निर्णय की अनुपस्थिति के आधार पर अपास्त नहीं की जा सकती- संविदात्मक बाध्यता के प्रश्न को रिट क्षेत्राधिकार में नहीं लिया जा सकता।' उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य (पूर्वोक्त) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि:

> "पक्षकारों के बीच संविदा निजी कानून के दायरे में एक संविदा है। यह एक वैधानिक संविदा नहीं है। यह संविदा अधिनियम के प्रावधानों द्वारा शासित है या, शायद, माल-बिक्री अधिनियम के कुछ प्रावधानों द्वारा भी। ऐसे संविदा की शर्तों एवं नियमों की व्याख्या से संबंधित कोई भी विवाद रिट याचिका में नहीं उठाया जा सकता है एवं न ही उठाया जाता है। यहां तक कि जब संविदा की शर्तों के अर्थ में कानून में परिवर्तन के कारण वैधानिक दायित्व में कमी आए, तब भी रिट याचिका में इस पर विचार नहीं किया जाना चाहिए। अर्थात्, यह मामला अनुबंध की शर्त की व्याख्या से संबंधित है और इसे मध्यस्थ या सिविल न्यायालय के समक्ष उठाया जाना चाहिए, जैसा भी स्थिति हो।"

केरल राज्य विद्युत बोर्ड एवं अन्य (पूर्वोक्त) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि:

> "रिट न्यायलय सामान्य मंच नहीं- किसी वैधानिक निकाय की संविदात्मक या वाणिज्यिक गतिविधियों में सार्वजनिक कानून के मुद्दे उठाना आवश्यक नहीं- ऐसी गतिविधियों से उत्पन्न विवादों को संविदा के कानून के सिद्धांतों के अनुसार सुलझाया जाना चाहिए एवं अभिनिर्धारित किया गया कि रिट याचिका करार के खंड की व्याख्या एवं कार्यान्वयन से संबंधित विवाद के रूप में संधार्य नहीं है।"

बिहार राज्य एवं अन्य (पूर्वोक्त) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि :-

> "राज्य ने विलम्ब के कारण (पीवीसी पाइप एवं फिटिंग की आपूर्ति हेतु) उत्तरवादी कंपनी के साथ संविदा का पर्यवसान कर दिया था, फिर अधिक कीमत पर फिटिंग खरीदी एवं उत्तरवादी के अंतिम बिल से अंतर काट लिया, जिसने राज्य को कुछ सड़क परमिट एवं अन्य दस्तावेज वापस न करके विलम्ब करने के लिए दोषी ठहराया, रिट याचिका संधार्य नहीं। संविदा के भंग से उत्पन्न गंभीर रूप से विवादित प्रश्न या प्रतिद्वंद्वी दावों की जांच की जानी चाहिए एवं एक व्यव्हार वाद में प्रस्तुत साक्ष्य के आधार पर निर्धारित किया जाना चाहिए।"

गंगा एंटरप्राइजेज एवं अन्य (पूर्वोक्त) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि “संविदात्मक मामलों में संविदाओं से संबंधित विवादों को भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत नहीं उठाया जा सकता है।”

(17) माननीय सर्वोच्च न्यायालय के उपरोक्त निर्णयों के परिप्रेक्ष्य में, यह स्थापित कानून है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत रिट याचिका अवैधानिक, शुद्ध संविदात्मक

मामलों में संधार्य नहीं है एवं जहां पक्षकारों के अधिकार एवं दायित्व संविदा की शर्तों द्वारा शासित होते हैं एवं पक्षकार राज्य द्वारा ऐसे करार के भंग की शिकायत करता है। पक्षकारों के बीच की संविदा निजी कानून के क्षेत्रान्तर्गत संविदा है एवं यह वैधानिक संविदा नहीं है। रिट याचिका केवल तब ही चलने योग्य होगी जब राज्य या इसके उपकरण किसी अधिनियम या उसके अंतर्गत बनाए गए नियमों के तहत वैधानिक शक्ति का प्रयोग करते हैं।

(18) परिणामतः, याचिकाकर्ता की याचिका गुणहीन होने से खारिज किये जाने योग्य है, अतः इसे खारिज किया जाता है। फलतः, इस न्यायलय द्वारा 12 जनवरी 2005 को प्रदान की गई रोक हटाई जाती है। व्यय के सम्बन्ध में कोई आदेश पारित नहीं किया है।

सही/-
(एल.सी. भादू)
न्यायाधीश

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा एवं कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

Translated by Soumitra Kesharwani, Advocate